eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

मानव और मूल्य

[1]डॉ0 अमिता रानी सिंह
[1]एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, नवयुग कन्या महाविद्यालय, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

Received: 07 July 2021, Accepted: 15 July 2021, Published with Peer Review on line: 10 Sep 2021

Abstract

'मूल्य' सर्वश्रेष्ठ मानव की सर्वोत्तम सम्प्राप्ति है। मूल्य मानव समाज का ऐसा स्वर्ण है जिससे उसके सारे कार्य, व्यापार एवं व्यवहार का मान निर्धारित होता है। मानव ने अपने आचरण से समस्त जीव जगत पर अपना वर्चस्व स्थापित कर रखा है। विवेक, आत्ममनन, श्रेष्ठ–आचरण, ब्रह्मजिज्ञासा, दायित्वबोध, श्रृद्धा, सत्साहित्य, मैत्री, अहिंसा, दानशीलता, पवित्रता, परिश्रम, समताभावना, कल्याणभावना, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष सभी मानव मूल्य है। किन्तु आज इन मानव मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। ईश्वर के प्रति उसकी आस्था क्रमशः टूटने लगी है। प्रस्तुत आलेख को खिलने का मेरा मकसद यही है कि वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की अति आवश्यकता है।

शब्द संक्षेप– 'मूल्य' सर्वश्रेष्ठ मानव, सर्वोत्तम सम्प्राप्ति, मानव और मूल्य।

Introduction

सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानव की सर्वोत्तम सम्प्राप्ति मूल्य है। मूल्य, मानव–समाज का ऐसा स्वर्ण है जिससे इसके सारे कार्य व्यापार, व्यवहार का मान निर्धारित होता है। मूल्य मानव को मूल्यवान बनाते हैं। मानव ने अपने आचरण से समस्त जीव जगत पर अपना वर्चस्व स्थापित कर रखा है। मानव सृष्टि के अन्य जीवों की तरह नहीं है। उसने अपने विवेक तथा संस्कारों से सदा अपना विकास किया है। उसने अपनी विशिष्टताओं, मूल्यों के कारण निज को मानव से महामानव तथा महामानव से देव की समकक्षता में प्रतिष्ठित किया है। आज विश्व की सारी प्रगति का कर्ता वही है। शरीर से आत्मा तथा आत्मा से अध्यात्म के लोकों में विचरने वाला, यह मानव ही है जिसने संसार में 'इदमित्थं' का निर्धारण करते हुए श्रेष्ठ–आचरणीय मानवीय मूल्यों की स्थापना की है। परमज्ञानी महात्मा व्यास ने सम्भवतः इसलिये कहा होगा कि – ''सत्य, शिव और सुन्दर हमारी जीवन यात्रा के मूल्यवान लक्ष्य हैं, जिनकी उपलब्धि आनन्दमयी स्थिति में पहुॅचा देती है।1

धर्मशास्त्रों का एक सामान्य सिद्धान्त है कि प्रत्येक युग में उसकी आवश्यकतानुसार 'धर्म' के बाह्म रूप में परिवर्तन होता रहा है–''मनुष्य की श्रुति, शौच और आचार सामयिक आवश्यकतानुसार बदलते रहते हैं।2 परन्तु वे आदर्श और मूल्य जो मनुष्य की मनुष्यता और मानव की मानवता का आधार है–शाश्वत और स्थायी रहते हैं। भारतीय संस्कृति में जिन मानवीय मूल्यों को दृढ़तापूर्वक स्वीकार किया गया है, वे सदा और सर्वत्र समान ही रहते हैं और मानव के धारकत्व होने से 'धर्म' कहलाते हैं। धर्म ने सारी प्रजा को धारण किया है अतः ''जिससे धारण और पोषण सिद्ध होता है, वही धर्म है।''3 धर्म अधोगति में मनुष्य को जाने से बचाता है, जीवन की रक्षा करता है। मनु ने मनुष्य मात्र के लिये आचरणीय धर्म के दस अंग बताये हैं–''धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, बुद्धि, विद्या,

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

सत्य और अक्रोध।''4 इनमें से अहिंसा सत्य, अस्तेय, शौच और इन्द्रियनिग्रह को विशेष महत्व दिया गया। मूल्यों का जन्म वस्तुतः एक व्यक्ति से होता है। बाद में किसी मूल्य में यदि बहुजनहिताकांक्षा है तो वह समूह अथवा समाज के द्वारा अपना लिया जाता है। मूल्यों में व्यक्ति हित के साथ बहुजनहित भी निहित होता है। सत्य यदि व्यक्ति का हितसाधक है तो समष्टि का भी। मुक्ति यदि वैयक्तिक मूल्य है तो वह अन्यों को मुक्ति का अभिप्रेरक भी।

भारतीय समाज, सभ्यता तथा संस्कृति ने विश्व में श्रेष्ठ मूल्य संहिता को जन्म दिया है महर्षि मनु ने कहा था कि–

एतद्देश प्रसूतस्य एकाशादग्र जन्मनः
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षरेन पृथिव्यां सर्वमानवाः।।5

वस्तुतः प्राचीन एवं मध्यकाल तक ईश्वर ही मानव – मूल्यों का नियामक रहा है, क्योंकि वह 'पुरूषोतम' है। अवतारवाद की जो बात शास्त्रों में देखी जाती हैं, वह उस लोकोत्तर अस्तित्व को मूल्यों का आधार बनाने से भी सम्बन्धित है जिससे व्यक्ति के सामने एक निश्चित राह दिखाई दे। इसीलिये कहा गया है–'राम, कृष्ण, बुद्ध आदि के रूप में विभिन्न युगों में मनुष्य चेतना द्वारा अपने विकास के आदर्शो को ही मूर्त किया गया है।'' 6 यह चेतना मानव की आध्यात्मिक चेतना ही है जो उसे इस मार्ग पर चलने को प्रेरित करती है।

छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पंत का मत है कि 'ईश्वर' केवल भूतकालीन मूल्यों का स्त्रोत ही नहीं, वरन वर्तमान और भविष्य में भी अभिव्यक्ति पाने वाले मूल्यों का स्त्रोत है तथा आगे भी रहेगा। आधुनिक युग के परिवर्तनों को देखते हुए यह मत तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता अपितु धार्मिक रूढ़िग्रस्तता का परिणाम ही अधिक प्रतीत होता है। जहॉ तक वर्तमान का प्रश्न है, वैज्ञानिक यंत्र–युग ने व्यक्ति का मन स्थिति में अधिकाधिक परिवर्तन कर के ईश्वर की सत्ता को झुठला कर मनुष्य की काल्पनिक आस्था तो तोड़ दिया है। पंत जी का मत विचारणीय है कि मानव मूल्यों का अन्वेषक चाहे वह स्रष्टा हो या द्रष्टा–उसे महत्तर आनन्द, प्रेम, सौन्दर्य तथा श्रेय के सूक्ष्म संवेदनों का जाहन्वी के अवतरण के लिये भगीरथ प्रयत्न करना पड़ता है। इसके लिये आत्म संस्कार आवश्यक है। आज के युग में ऐसे विश्वास काफी हद तक खोखले होते जा रहे हैं। परम्परागत धार्मिक तथा दार्शनिक चेतना मिथ्या सिद्ध होती चली आ रही है। धीरे–धीरे ईश्वर को आध्यात्मिक अर्थ में ग्रहण न करके मानवता की परिणति के रूप में मान्य किया जाने लगा। डॉ0 रघुवंश के अनुसार कुछ विचारकों ने आधुनिक जीवन के आसन्न संकट तथा मूल्यों में विघटन का कारण मानवीय नैतिकता के चरम स्त्रोत के रूप में ईश्वर की अस्वीकृति को माना है और नवीन मूल्यों तथा मानव प्रतिष्ठा की पुनः स्थापना के लिये ईश्वर की स्वीकृति के रूप में ही की गई है, जिससे व्यक्ति अपनी मूल्य मर्यादा को ग्रहण करता है।''7

आज जीवन और साहित्य में मूल्यों की चर्चा करना दिखावा सा हो गया है। मूल्य मानव–जीवन का मूल है। मूल्यों के अभाव में हम प्राणी तो कहला सकते हैं, पर मानव नहीं। मानव का मान मूल्यों पर ही निर्भर है। मानव की प्रतिष्ठा का आधार जीवन मूल्य ही होते हैं। वर्तमान में हम जो कुछ हैं उनमें मूल्यों की अहम भूमिका है। ''नहिं मनुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित''8 महाभारतकार के प्रस्तुत कथन

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

में मानव की श्रेष्ठता मूल्यों के कारण ही प्रतिपादित हुई है। मानवतावादी समीक्षक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मनुष्य को ही मुख्य मानते हैं और बाकी सब को गौण। वास्तविकता में वह जीवन मूल्य जो सही मायने में जीवन को जीने का आकार देते हैं वही मानव की महानता को रेखांकित करते हैं।

मानव मूल्य वह है जिसे हम अपने जीवन में अपनाकर अनुसरण करना चाहें, जहॉ हमें ऐसा लगता हो कि इसके माध्यम से हमारे जीवन का विकास होगा, हमारा जीवन महत्वपूर्ण बनेगा, यही विचारण मानव मूल्यों की आधार भूमि होती है। वस्तुतः यही मूल्य साहित्य के मूल्य होते हैं। साधारण शब्दों में जीवन और साहित्य के मूल्यों में कोई भिन्नता नहीं है, क्योंकि जीवन की ही कलात्मक अभिव्यक्ति साहित्य में होती है।

मानव मूल्यों की सही पहचान करना आज सबसे बड़ा संकट है। बहुत सी ऐसी बातें जो जीवन को विकृत कर रही हैं उन्हें भी हम मूल्य मानने की भूल कर रहे हैं। यह बात स्पष्ट है कि विकृति कभी भी जीवन का मूल्य नहीं हो सकती। अतः आज समाज में जो उतार चढ़ाव आ रहा है वह जीवन की प्रगति में कितना मददगार है इस तथ्य को ही आधार बनाकर मानव मूल्यों की परख की जा सकती है। ऐसी स्थिति में पूर्व की अपेक्षा हमारा उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ गया है। हम सभी को अपनी नीर–क्षीर विवेक की क्षमता को अधिकाधिक जागृत करना होगा ताकि इन उलझन भरी विपरीत परिस्थितियों में भी उचित का निर्णय ले सकें।

आज हम मूल्य संकट के दौर से गुजर रहे हैं, भौतिकतावादी परिस्थितियों ने हमारे परम्परागत जीवन को बदल सा दिया है, पर वैचारिक दृष्टि से आज भी हम अपनी पृष्ठभूमि से ऊर्जा ग्रहण कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में टकराहट और तनाव की स्थिति बढ़ रही है। आज हमने विभिन्न विचार धाराओं से अपने इर्द–गिर्द संघर्ष का वातावरण खड़ा कर दिया है। गीता का उपदेश ''जैसा करोगे वैसा भरोगे'' के माध्यम से मनुष्य को सद् कर्म की ओर सचेत किया गया है और साथ में फल प्राप्ति की निश्चितता भी है। मनुष्य स्वयं अपने सुख–दुख का उत्तरदायी है। आत्म संतोष हमारे जीवन का महत्वपूर्ण मूल्य रहा है। इसी के कारण मानव तनाव से दूर है। आज सुख–सुविधाओं की होड़ में छीना–छपटी का माहौल बना हुआ है। हम आज जो कुछ दूसरे के पास हैं उसे छीनकर अपने सुख में वृद्धि करना चाहते हैं। प्रश्न यह है कि ये क्षणभंगुर सुविधाएं हमें मानसिक शांति प्रदान कर सकेंगी? भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण आदर्श ''वसुधैव कुटुम्बकम'' तथा 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' में कहीं भी कोई विरोध नहीं है। हमने सबके सुख की कामना की है पर आज हम केवल अपने सुख की बात करते हैं, क्योंकि हमें ऐसा लगता है कि सुख सीमित है यदि वह उसे मिलेगा तो मुझे नहीं मिलेगा। आज दुनिया में लड़ाई–झगडों के पीछे यही तो भावना काम कर रही है। वैदिक भावनानुसार हमारा दृष्टिकोण विशाल ही रहे और हम सभी के कल्याण की कामना करें तो कितना अच्छा हो। प्रतिस्पर्धा के युग में आज एक दूसरे को नीचा दिखाने की बात उपज रही है।

आज समाज में बढ़ते अन्याय के प्रति विरोध तो है पर वह मुखर नहीं है। विरोध कौन मोल ले? अन्याय के प्रति संघर्ष कौन करें? समाज में महात्मा गॉधी के वैष्णव जन के सेवाभाव को पुनः जाग्रत करने की आवश्यकता है। बुद्ध की करूणा से ही विश्व का भला हो सकता है। हमें अपनी सोच को

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

अधिक विस्तृत करने की आवश्यकता है। राष्ट्रीयता की सीमा से ऊपर उठकर सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की बात सोचनी होगी, अधुनातन और पुरातन के बीच सामंजस्य स्थापित करना होगा। नव युवा छात्र–छात्राओं में बढ़ रही अनुशासनहीनता, निराशा, पाश्चात्य संस्कृति के प्रति आकर्षण तथा उसका अनुसरण और भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति उनकी अनास्था एवं अनभिज्ञता इस बात को सिद्ध करती है कि हमारी शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता है। साहित्य संस्कृति का व्याख्याता होता है।

हिन्दी साहित्य राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक बोध का अथाह सागर है, वह हमारे राष्ट्र की सांस्कृतिक परम्पराओं का अक्षय भण्डार है। साहित्य में अद्वितीय प्रेरणादायिनी शक्ति तथा अद्‌भुत प्रभाव–क्षमता होती है। बचपन में पढ़ी हुई शिक्षा–प्रद कथाएं व्यक्ति–ताउम्र नहीं भूलता, इसलिये जो कार्य शासन व अनुशासन से नहीं हो सकता उसे साहित्य अनायास ही कर सकता है। अतः साहित्य की पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थियों को सही मूल्य–दिशा देने में, उनकी भावनाओं का परिष्कार करने में, उनके अनुभव ज्ञान का विस्तार करने में तथा उन्हें सद्‌व्यवहार और सदाचरण की प्रेरणा व शिक्षा देने में सर्वाधिक उपयोगी और सहयोगी सिद्ध हो सकती है''।

आज अर्थसंज्ञक मूल्य भारी होता नजर आ रहा है। काम संज्ञक मूल्य के साथ उसकी अधिक सांठ–गांठ है, धर्म और मोक्ष विषयक मूल्य बोध पतले होते जा रहे हैं। यह स्थिति संस्कृति के लिये घातक है। अर्थ और काम उसी भाषा तक आवश्यक है जहॉ तक ये धर्म के सम्पादन में सहायक हो, साधन हो। साधन जब साध्य बन जाता है। मनुष्य मूल मंतव्य तक नहीं पहुॅच सकता। यह मूल्य बोध अपने अन्दर विकसित करना ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ :–

1– A Manual of Ethics John S. Mackenigie Delhi, 1973, P7
2– वैदिक संस्कृति के तत्व मंगल देव शास्त्री पृ 20
3– धारणाद् धर्ममित्याहुधर्मो धारयते प्रजाः महा कर्ण 69/58
4– मनु 6/92
5– परिशोध–पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ पृष्ठ–8
6– नया साहित्यः कुछ पहलु–विष्णु स्वरूप पृष्ठ 13
7– परिशोध – पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ पृष्ठ 13
8– परिशोध – पंजाब यूनिवर्सिटी चंडीगढ़ पृष्ठ 29